अध्याय–4
राजस्थान के प्राकृतिक संसाधन एवं उनका संरक्षण

मानव जीवन का अस्तित्व, प्रगति एवं विकास संसाधनों पर निर्भर है। आदिकाल से मनुष्य प्रकृति से विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त कर अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करता आ रहा है। प्रकृति ने अनेक प्रकार के जैविक तथा अजैविक पदार्थ दिये हैं उन्हें मानव अपने ज्ञान एवं तकनीक से अपने उपयोग में लेता है। वे सभी प्रकृति प्रदत्त पदार्थ जिन्हें मानव अपने उपयोग में लेता है, वे **'प्राकृतिक संसाधन' (Natural Resources)** कहलाते हैं। प्रकृति अथवा प्राकृतिक वातावरण न केवल इन संसाधनों को उत्पन्न करती है अपितु उन्हें निरन्तर बनाये रखने का भी कार्य करती है। किन्तु जब इनका अत्यधिक शोषण होने लगता है तब इनके समाप्त होने का संकट आ जाता है। इसी कारण इनके संरक्षण की आवश्यकता होती है, जिससे न केवल वर्तमान की आवश्यकता पूर्ण हो अपितु ये संसाधन भविष्य के लिये भी बचे रहें।

प्रस्तुत अध्याय में राजस्थान के प्राकृतिक संसाधनों के अन्तर्गत वन, मृदा, जल, वन्य जीव एवं खनिज संसाधनों का राज्य में वर्तमान स्वरूप एवं उनके संरक्षण का संक्षिप्त विवेचन किया जा रहा है।

वन संसाधन

वन अथवा प्राकृतिक वनस्पति प्रकृति प्रदत्त सम्पदा है जो एक ओर मानव के अनेक उपयोग में आते हैं तो दूसरी ओर पर्यावरण के सन्तुलन को बनाये रखने में सहायक होते हैं। वनों से अनेक प्रकार की उपयोगी वस्तुएँ जैसे इमारती लकड़ी, जलाऊ लकड़ी, लकड़ी का कोयला, प्लाइवुड, बांस, बेंत, लुग्दी, शहद, सेल्योलाज, पशुओं का चारा, गोंद, रबर, लाख, कत्था, रेशेदार पदार्थ, अनेक प्रकार की औषधियां आदि तो प्राप्त होती है साथ में ये अनेक जीव–जन्तुओं एवं वनस्पति समूहों को प्रश्रय देकर उनकी अनेक प्रजातियों को नष्ट होने से बचाती है।

राजस्थान की प्राकृतिक संरचना इस प्रकार की है कि यहाँ भारत के अन्य राज्यों की तुलना में वनों का विस्तार अपेक्षाकृत कम है। राजस्थान में वन क्षेत्र का विस्तार 32,701 वर्ग किलो मीटर के क्षेत्र है जो राज्य के कुल क्षेत्र का 9.55 प्रतिशत है। यह प्रतिशत राष्ट्रीय वन नीति द्वारा निर्धारित 33.33 प्रतिशत से बहुत कम है। राज्य में वन क्षेत्रों के सीमित विस्तार का कारण यहाँ कम वर्षा होना, उच्च तापमान, मरूस्थली क्षेत्रों का अधिक विस्तार, अनियन्त्रित पशुचारण तथा मानव द्वारा किया जाने वाला वनोन्मूलन है। किन्तु इससे यह तात्पर्य नहीं कि यहाँ वनों का क्षेत्र कम हो रहा है। अपितु 15 वर्षों में यहाँ के वन क्षेत्र में वृद्धि हुई है। वर्ष 1990–91 में जहाँ राज्य में वन क्षेत्र का प्रतिशत 6.87 था वह वर्ष 31 मार्च 2003 में 9.55 प्रतिशत हो गया।

प्रदेश में सर्वाधिक वन क्षेत्र उदयपुर जिले में 4141 वर्ग किमी है। उसके बाद बारां जिले में है जिसका विस्तार 2239 वर्ग किमी है। इसके पश्चात् चितोड़गढ़ एवं करौली जिलें है। सबसे कम वन क्षेत्र चूरू जिले में है, जिसका विस्तार 71 वर्ग किमी में है। राज्य के 500 वर्ग किमी से कम वन क्षेत्र वाले जिले हैं : झुन्झुनू, जोधपुर, दौसा, भरतपुर, हनुमानगढ़, जालोर, नागौर, टोंक एवं राजसमन्द।

प्रशासनिक दृष्टि से राज्य के वनों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया है, ये हैं –

(i) **आरक्षित वन (Reserved Forest)** – जिन पर पूर्ण सरकारी नियंत्रण होता है।

(ii) **सुरक्षित वन (Protected Forest)** – इनमें लकड़ी काटने, पशुचारण की सीमित सुविधा दी जाती है तथा इनको संरक्षित रखने का भी प्रयत्न किया जाता है।

(iii) **अवर्गीकृत वन (Unclassified Forest)** – इनमें

शेष वन सम्मिलित किये जाते है, जिन पर सरकार का कोई नियंत्रण नहीं होता।

भौगोलिक दृष्टि से वनों की प्रकृति एवं उनमें उपलब्ध वनस्पति समूहों के आधार पर राजस्थान के वनों को निम्नलिखित तीन वृहत् श्रेणियों में विभक्त किया जाता है–

(i) उष्ण कटिबंधीय कँटीले वन – इस प्रकार के वन पश्चिमी राजस्थान के शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क प्रदेशों में है। इनमें काँटेदार वृक्ष एवं झाड़ियाँ प्रमुख होती है। इन वनों में खेजड़ा, रोहिड़ा, बेर, बबूल, कैर आदि के वृक्ष मिलते है। इनमें **खेजड़ा** एक बहु–उपयोगी वृक्ष है, जिसे राज्य वृक्ष का दर्जा दिया गया है।

(ii) उष्ण–कटिबंधीय शुष्क पतझड़ वाले वन – इस प्रकार के वन अरावली पर्वत श्रेणी के उत्तरी और पूर्वी ढालों पर विशेषकर विस्तृत है। इसके अतिरिक्त दक्षिणी एवं दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान में भी इन वनों का विस्तार है। इन वनों में धोकड़ा, गूलर, आम, बरगद, पलाश, बांस, आंवला, ओक, थोर, कैर, सेमल आदि मिलते हैं। दक्षिणी राजस्थान में सागवान की उपयोगी लकड़ी इन्हीं वनों से प्राप्त होती है।

(iii) उप–उष्ण पर्वतीय वन – इस प्रकार के वन राजस्थान में केवल सिरोही जिले के आबू पर्वतीय क्षेत्र में है। इन वनों में सदाबहार एवं अर्द्ध–सदाबहार वनस्पति होती है।

सामान्य रूप से राजस्थान में शुष्क सागवान वन, सालर वन, ढाक अथवा पलाश के वन, मरूस्थली वनस्पति, शुष्क पतझड़ वन तथा मिश्रित वन मिलते है। गंगानगर हनुमानगढ़ जिलों में शीशम के वृक्ष भी पर्याप्त है।

वन संसाधनों का प्राकृतिक एवं आर्थिक महत्व

वन एक प्राकृतिक संसाधन है जिनका बहुमुखी उपयोग है। वन पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी संतुलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वनों का पर्यावरणीय महत्त्व निम्न तथ्यों से है –

(i) प्राकृतिक सुंदरता में अभिवृद्धि करते हैं।
(ii) पर्यावरण को शुद्ध रखते हैं।
(iii) जलवायु को सम बनाते हैं, तापमान में वृद्धि रोकते हैं।
(iv) आर्द्रता में वृद्धि कर वर्षा में सहायक है।
(v) जलवायु परिवर्तन को रोकते है।
(vi) मिट्टी के कटान को रोकते है।
(vii) जैव–विविधता को संरक्षित रखते हैं।

वनों का आर्थिक महत्व भी अत्यधिक है। राज्य में वनों से लगभग 45 हजार व्यक्तियों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रोजगार मिलता है। राजस्थान के वनों से जो मुख्य उपजें प्राप्त होती हैं वे हैं– इमारती लकड़ी (सागवान, धोकड़ा, सालर, शीशम, बबूल, आदि से), ईंधन हेतु लकड़ी और कोयला, तेंदू पत्ता (जिसका उपयोग बीड़ी बनाने में होता है), बाँस, गोंद, कत्था एवं लाख, घास, खस, महुआ एवं अनेक प्रकार की ओषधियों के स्त्रोत है। इसके अतिरिक्त वनों से आँवला, कैर, बैर, शहद, मोम, तेंदू तथा अनेक कन्दमूल प्राप्त होते है। वास्तव में वनों का उपयोग बहुमुखी है और प्राकृतिक संसाधनों में एक मूल्यवान संसाधन है।

वन संरक्षण की आवश्यकता

राजस्थान में वनों की सीमित उपलब्धता एवं उनके तीव्र गति से हो रहे विनाश के कारण निम्नांकित समस्याओं का जन्म हो रहा है–

(i) पारिस्थितिकी असंतुलन उत्पन्न होना।
(ii) वायु मण्डल में नमी धारण करने की क्षमता में कमी।
(iii) तापमान में वृद्धि।
(iv) वर्षा में कमी।
(v) मृदा अपरदन में वृद्धि।
(vi) बाढ़ प्रकोप में वृद्धि।
(vii) भूमि उर्वरता में कमी।
(viii) वन जीव–जन्तुओं की प्रजातियों का नष्ट होना।
(ix) पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि।
(x) वनों से प्राप्त पदार्थों का उपलब्ध न होना, आदि उपर्युक्त कारणों से वनों का राज्य में संरक्षण अति आवश्यक है।

वनों का संरक्षण एवं संवर्धन

वनों का संरक्षण अथवा उनका विकास और विस्तार वर्तमान की प्रमुख आवश्यकता है। इस दिशा में अनेक सरकारी प्रयत्न किये जा रहे है साथ में सामाजिक एवं व्यक्तिगत स्तर पर भी प्रयत्न करने की आवश्यकता है। वन संरक्षण हेतु कतिपय उपाय निम्नांकित है –

1. **नियन्त्रित एवं उचित विधि से कटाई –** वनोन्मूलन का प्रमुख कारण अनियन्त्रित कटाई है। वनों की कटाई इस प्रकार की जानी चाहिये जिससे वनों का विनाश भी न हो और लकड़ी आदि पदार्थ भी प्राप्त होते रहे। इसके लिये परिपक्व वृक्षों की कटाई, वृक्षों की शाखाओं की कटाई, के पश्चात् वृद्धि के लिये छोड़ना तथा वनों का आनुपातिक विकास आवश्यक है।

2. **वनों का आग से बचाव।**
3. **कृषि, आवास एवं अन्य विकास कार्यों हेतु वनों के विनाश पर रोक।**
4. **बांधों से वनों के जल मग्न होने से बचाव।**
5. **वनों का पर्यटन स्थलों के रूप में विकास।**
6. **वृक्षारोपण अर्थात् पुनः वन लगाना।**
7. **वनों में अनियंत्रित पशु चारण पर रोक।**
8. **वन संरक्षण में प्रशासन की सक्रीय भूमिका –** प्रशासन द्वारा ही वन संरक्षण सम्भव है क्योंकि सरकारी विभागों को ही वन संरक्षण का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। प्रशासन वन संरक्षण में निम्न कार्य सम्पादित कर सकता है– वन सम्बन्धित कानूनों को लागू करना, वनों का सर्वेक्षण करना, वन विकास के क्षेत्रों का निर्धारण करना, वनों को आग से बचाना, वृक्षारोपण कार्यक्रम का सफल क्रियान्वन करना, वन उत्पादनों पर सरकारी नियंत्रण, वन संरक्षण हेतु जागरूकता जागृत करना तथा प्रोत्साहन देना आदि।

9. **सामाजिक एवं स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा वन संरक्षण –** वन संरक्षण में सामाजिक एवं स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा जन जागृति पैदा करना, वृक्षा रोपण तथा वृक्षों की उचित देखभाल करके वन संरक्षण में महती भूमिका निभा सकती है। सरकार द्वारा चलाये जा रहे **'सामाजिक वानिकी'** एवं **'हरित राजस्थान'** कार्यक्रमों को स्वयंसेवी संस्थायें सफल बना सकती है।

10. **उचित वन प्रबन्धन –** द्वारा वन संरक्षण एवं संवर्धन किया जा सकता है। इसके लिये आवश्यक है– **वन सर्वेक्षण, वनों का वर्गीकरण, वनों का उचित आर्थिक उपयोग, वनों की प्रशासनिक व्यवस्था, पर्यटन हेतु वनों का उपयोग, सामाजिक वानिकी, वन अवबोध कार्यक्रम, वन अनुसन्धान तथा वन विकास हेतु मास्टर प्लान तैयार करना** आदि।

उपर्युक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए राजस्थान में सरकार ने वनों के संरक्षण एवं विकास के लिये अनेक प्रयत्न किये है। इसके अन्तर्गत वनोन्मूलन पर रोक, वृक्षारोपण (जिसमें अरावली वृक्षारोपण कार्यक्रम महत्त्वपूर्ण है), सामाजिक वानिकी का विस्तार, मरूस्थली क्षेत्रों में **'काजरी'** (शुष्क क्षेत्र अनुसंधान केन्द्र जो जौधपुर में स्थित है) की सहायता से उपयुक्त वृक्षों को लगाना, ग्राम्य वन सुरक्षा प्रबन्ध समितियों का गठन, वन विकास अभिकरणों का गठन, प्रकृति पर्यटन को प्रोहोत्सान तथा हाल ही में चलाये जा रहे 'हरित राजस्थान' कार्यक्रम महत्त्वपूर्ण हैं।

मृदा संसाधन

'मृदा' (Soil) जिसे सामान्य रूप से मिट्टी कहा जाता है भूमि की ऊपरी सतह होती है, जो चट्टानों के टूटने–फूटने एवं विघटन से उत्पन्न सामग्री तथा उस पर पड़े जलवायु, वनस्पति एवं जैविक प्रभावों से विकसित होती है। यह एक अनवरत प्रक्रिया का प्रतिफल होती है। इस प्रक्रिया में अनेक भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन होते हैं तथा उसमें जीव अंश एवं वनस्पति के अंश सम्मिलित होकर उसे एक निश्चित स्वरूप प्रदान करते है जो कृषि विकास के लिये आधार होती है, अतः यह एक प्राकृतिक संसाधन है।

राजस्थान की अधिकांश मृदा जलोढ़ अर्थात् जल द्वारा बहा कर लाई गई मिट्टी एवं वातोढ़ अर्थात् वायु द्वारा जमा की गई मिट्टी है। अरावली की ढालों पर कंकड़ युक्त सतह है जबकि दक्षिणी–पूर्वी पठार के भाग में काली एवं लाल मृदा है। राजस्थान की मृदाओं का उनके उपजाऊपन,

कृषि के लिये उपयुक्तता एवं अन्य विशेषताओं के आधार पर निम्नांकित प्रकारों में विभक्त किया जाता है–

1. **जलोढ़ मृदा** – पूर्वी राजस्थान में नदियों द्वारा जमा की गई मृदा है। इसका रंग कहीं लाल, कहीं भूरा है तथा उत्पादकता की दृष्टि से यह उत्तम है।

2. **लाल और पीली मिट्टी** – यह सवाई माधोपुर, भीलवाड़ा जिलों के पश्चिमी भाग में तथा अजमेर और सिरोही जिलो में पाई जाती है। इसमें लोह अंश की प्रधानता तथा कार्बोनेट की कमी होती है।

3. **लाल–लोमी मृदा** – यह मृदा उदयपुर जिले के मध्य और दक्षिणी भाग में और डूँगरपुर में मुख्यतः मिलती है। इसमें उत्पादकता सामान्य होती है।

4. **लाल और काली मृदा** – यह भीलवाड़ा, उदयपुर के पूर्वी भाग, चित्तोड़गढ़, डूँगरपुर, बाँसवाड़ा जिलों में विस्तृत है। यह लाल मृदा मालवा की काली मिट्टी का विस्तार है। यह कपास, मक्का आदि के लिये उपयुक्त होती है।

5. **मध्यम प्रकार की काली मृदा** – यह हाड़ौती के पठार में विस्तृत है। यह गहरे भूरे रंग से काले रंग तक होती है। यह कपास, मूंगफली तथा दालों के लिये उपयुक्त होती है।

6. **रेतीली मृदा** – यह पश्चिमी राजस्थान के मरूस्थली प्रदेश में विस्तृत है। इसमें फॉस्फेट की मात्रा पर्याप्त होती है और पानी उपलब्ध होने पर अच्छी फसल देती है।

मृदा संरक्षण

मृदा किसी भी प्रदेश अथवा क्षेत्र के कृषि विकास का आधार है। सामान्यतया यह माना जाता है कि मृदा एक ऐसा संसाधन है जो कभी समाप्त नहीं होता और प्रकृति इसे संरक्षित करती रहती है। किन्तु वास्तविक सत्य इससे भिन्न है अर्थात् मृदा का निरन्तर विनाश होता रहा है। प्राकृतिक एवं मानवीय कारणों से मृदा नष्ट होती जा रही है जो एक ऐसा संकट है जिसका निराकरण यदि समय पर नहीं हुआ तो विनाश का कारण बन जायेगा। इसी कारण मृदा का संरक्षण आवश्यक है।

मृदा की सबसे बड़ी समस्या **मृदा अपरदन** (Soil Erosion) है अर्थात् जल से, वायु से अथवा सामान्य प्रक्रिया से मृदा का कटान होता जाता है। राजस्थान के मरूस्थली क्षेत्रों में वायु अपरदन की समस्या है, तो चम्बल नदी के क्षेत्रों में जल अपरदन से हजारों हैक्टेयर भूमि **'बीहड़'** में बदल गई है। भूमि की लवणता एवं भूमि का जल प्लावित होना वर्तमान में नहरी सिंचित क्षेत्रों की प्रधान समस्या है। इसी प्रकार भूमि का उपजाऊपन कम हो जाना सम्पूर्ण राज्य की समस्या है। अतः भूमि का उचित संरक्षण अति आवश्यक है।

मृदा संरक्षण की प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित है–

1. **वनस्पति आवरण का विकास** – मृदा के कटाव को रोकने के लिये भूमि को संगठित रखना आवश्यक है। इसका सबसे सार्थक उपाय वृक्षारोपण है क्योंकि वृक्षों की जड़े भूमि को संगठित रखती है और भूमि का कटाव नहीं होता। इसके लिये संरक्षी वृक्षारोपण किया जाना आवश्यक है। हरित पेटियों का विकास एक उपयुक्त कदम है।

2. **पट्टीदार कृषि (Strip Cropping)** – विधि से फसलों को समोच्च रेखाओं पर पंक्तियों में इस प्रकार बोया जाता है कि प्रवाहित जल का वेग कम हो जाता है तथा प्रवाहित मृदा अपरदन रोधी पट्टिकाओं में जमा हो जाती है।

3. **फसल चक्रीकरण (Crop-Rotation)** – यदि एक प्रकार की फसल निरन्तर उगाई जायगी तो भूमि के अनेक रासायनिक एवं जैविक तत्व कम हो जाते है और भूमि की उर्वरा शक्ति समाप्त हो जाती है। यदि फसलों को बदल–बदल कर बोया जायगा तो भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती है।

4. **पशुचारण पर नियंत्रण** – अनियन्त्रित पशुचारण भूमि कटाव का प्रमुख कारण है इसे नियन्त्रित किया जाना आवश्यक है।

5. **रासायनिक उर्वरकों का सीमित प्रयोग** – निरंतर रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति कम होने लगती है। अतः रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैविक उर्वरकों का प्रयोग उत्तम रहता है।

उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्त **बाढ़ नियंत्रण,**

स्थानान्तरण कृषि पर प्रतिबन्ध, अवनालिया नियंत्रण, उचित भूमि उपयोग तथा **मृदा प्रबन्धन** किया जाना आवश्यक है।

जल संसाधन

जल एक ऐसा प्राकृतिक संसाधन है जिस पर केवल मानव ही नहीं अपितु वनस्पति एवं सम्पूर्ण जीव जगत निर्भर है। राजस्थान जैसे राज्य के लिये जल का महत्त्व और भी अधिक हो जाता है, क्योंकि इसका आधे से अधिक भाग शुष्क एवं अर्द्धशुष्क है, जहाँ वार्षिक वर्षा का औसत 25 से. मी. से कम है। इस प्रदेश में सूखा और अकाल सामान्य है और प्रत्येक वर्ष कुछ–न–कुछ जिले सूखे की चपेट में आ जाते है। अनेक मरूस्थली क्षेत्रों में पेयजल उपलब्ध होने में भी कठिनाई होती है। स्वतंत्रता के पश्चात् राज्य के जल संसाधनों के विकास हेतु समुचित प्रयत्न किये गये और वर्तमान में भी किये जा रहे हैं, किन्तु राज्य की प्राकृतिक परिस्थितियों, विशेषकर जलवायु की प्रतिकूलता के कारण इसमें कठिनाई आ रही है। वर्तमान में राज्य न केवल स्वयं के जल संसाधनों का उपयोग कर रहा है, अपितु पड़ौसी राज्यों से भी जल प्राप्त कर रहा है।

राजस्थान में जलापूर्ति के लिये जो जल–संसाधन उपलब्ध हैं, उनमें नदियाँ, झीलें, तालाब एवं भूमिगत जल प्रमुख हैं। राज्य के जल संसाधनों का संक्षिप्त विवेचन निम्नांकित हैं–

सतही जल संसाधन –

राजस्थान के सतही जल संसाधनों में नदियाँ, झीलें तथा तालाब प्रमुख है। ये स्त्रोत प्राकृतिक है, किन्तु इनसे नहरें निकाल कर इनके जल का व्यापक क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है।

नदियों की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति अन्य राज्यों की तुलना में अच्छी नहीं है। क्योंकि यहाँ नदियाँ कम है और चम्बल के अतिरिक्त कोई भी नदी वर्ष पर्यन्त प्रवाहित नहीं होती। चम्बल के अतिरिक्त अन्य सभी नदियों में जल प्रवाह सीमित है तथा वे वर्षा काल में ही प्रवाहित होती है। राज्य की प्रमुख नदियाँ – **चम्बल, बनास, लूनी, माही, बाणगंगा, बेड़च, साबरमती, गम्भीरी, सूकड़ी, काली सिन्ध, पार्वती, परवन**, **मेज** आदि हैं। इन नदियों का जल प्रयोग सीधे नदियों से तथा इन पर बनाये गये बांधों से निकाली गई नहरों के माध्यम से किया जा रहा है। राज्य में नदियों की उपलब्ध मात्रा का लगभग 40 प्रतिशत जल का ही उपयोग किया जा रहा है।

झीलें राजस्थान में जलापूर्ति का माध्यम हैं और यह सतही जल संसाधनों में महत्त्वपूर्ण है। राजस्थान में दो प्रकार की झीलें है एक खारे पानी की, दूसरी मीठे पानी की। इसमें मीठे पानी की झीलें पेय जल एवं सिंचाई हेतु जल प्रदान करती है। राज्य की प्रमुख मीठे पानी की झीलें हैं – **जयसमन्द, पिछोला, फतेहसागर** (उदयपुर), **राजसमंद** (राजसमंद), **आना सागर, पुष्कर** (अजमेर), **सिलीसेढ़** (अलवर), **कोलायत** (बीकानेर), **नवलखा झील** (बूंदी), **गोव सागर** (डूंगरपुर), **कायलाना, बालसमंद झील** (जौधपुर), **बैरठा बांध** (भरतपुर), **राजगढ़,** (जयपुर), **नक्की झील** (माउण्ट आबू, सिरोही) आदि। इसके अतिरिक्त राजस्थान में अनेक छोटी भी झीलें हैं जो जल उपलब्ध कराती है।

तालाब राजस्थान में जल का एक अच्छा स्त्रोत है जिसमें वर्षा का जल एकत्र कर उसका उपयोग सिंचाई एवं पेय जल के रूप में किया जाता है। राज्य में लगभग 450 तालाब एवं जलाशय हैं।

भू–जल संसाधन

राजस्थान के जल संसाधनों में भू–जल महत्त्वपूर्ण है और इनका उपयोग सदियों से जल प्राप्ति में किया जाता है। यद्यपि राज्य में भू–जल की उपलब्धता सीमित है और जल स्तर भी नीचा है। राज्य में अजमेर, अलवर, भीलवाड़ा, जयपुर, उदयपुर जिलों में 50 प्रतिशत से अधिक उपलब्ध भूमि जल को उपयोग में लिया जा रहा है। दूसरी ओर जैसलमेर, बीकानेर, चूरू में जल स्तर कम हो रहा है। वर्तमान में ट्यूब वैल द्वारा गहराई से भू–जल निकाल कर सिंचाई की जा रही है। राज्य में लगभग 70 प्रतिशत सिंचाई नल एवं नलकूप से की जा रही है। केन्द्रीय भू–जल विभाग के आंकड़ों के अनुसार राज्य में 88632 लाख क्यूबिक मीटर

प्रतिवर्ष भूमि जल उपलब्धता की सम्भावना है।

भू–जल का एक अन्य पहलू यह है कि तीव्र गति से हो रहे शोषण के परिणाम स्वरूप जल स्तर निरन्तर नीचे गिरता जा रहा है। भू–जल उपलब्धता एवं जल स्तर के आधार पर राज्य को 595 खण्डों में विभक्त किया गया है। इसमें 206 ब्लाक चिन्ताजनक स्थिति में है तथा इनकी संख्या निरंतर अधिक होती जा रही है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि राजस्थान में जल संसाधन सीमित है अतः उनका संरक्षण एवं उचित उपयोग अति आवश्यक है।

जल संरक्षण

राजस्थान में जल संरक्षण हेतु निम्नलिखित विधियाँ उपयोगी रहेगी–

1. **सिंचाई हेतु नवीन पद्धतियों को अपनाना** – पानी बचाने के लिये अतिआवश्यक है कि सिंचाई के लिये नवीन एवं आधुनिक तकनीक को अपनाया जाय। इसके लिये **फव्वारा** (Sprinkler) तथा **बूंद–बूंद सिंचाई** (Drip Irrigation) विधियाँ सर्वोत्तम हैं। इससे 50 प्रतिशत पानी की बचत हो सकती है। इसी प्रकार खेतों में रबर के पाइप से पानी पहुंचाने पर व्यर्थ होने वाले पानी को बचाया जा सकता है। इस दिशा में सरकार पर्याप्त प्रयास कर रही है तथा इसके लिये अनुदान भी दिया जा रहा है।

2. **भूमिगत जल का विवेकपूर्ण उपयोग** – राज्य के अनेक भागों में भूमिगत जल ही मुख्य स्त्रोत है, अतः इसका अत्यधिक दोहन न करके उचित उपयोग किया जाना चाहिए।

3. **वनस्पति विनाश पर नियंत्रण** – वनस्पति जल चक्र को चलाने में सहयोगी होती है। वनों के विनाश से सूखा पड़ता है। वन वायुमण्डल में नमी बनाये रखने में सहायक होते है तथा वर्षा में सहायक होते है। अतः वनस्पति विनाश को रोकना जल संरक्षण हेतु आवश्यक है।

4. **वर्षा जल का संचयन अर्थात् रेनवाटर हार्वेस्टिंग**– अधिकांश तथा वर्षा का जल व्यर्थ चल जाता है अतः इसका संचय आवश्यक है। इसका सबसे उत्तम उपाय है वर्षा के जल को भवनों की छत पर एकत्र कर उसे सुरक्षित रखना। रेनवाटर हर्विस्टिंग विशेषज्ञों के अनुसार इसके पांच तरीके निम्नलिखित हैं–

(अ) सीधे जमीन के अन्दर– इसमें बरसाती पानी को एक गड्ढे के जरिये सीधे भूगर्भीय भण्डार में उतार दिया जाता है।

(ब) खाई बना कर रिचार्जिंग– बड़े संस्थानों के परिसर में बाउंड्री वाल के पास बड़ी नालियाँ बनाकर जमीन के भीतर उतारा जाता है।

(स) कुओं में पानी उतारना– छत के पानी को पाइप द्वारा घर या पास स्थित कुएं में उतारा जाता है, इस तरीके कुआं रिचार्ज होता है तथा भूमिगत जल स्तर में सुधार होता है।

(द) ट्यूबवेल में पानी उतारना– एक पाइप के द्वारा छत पर जमा बरसाती पानी को सीधे ट्यूबवेल में उतारा जा सकता है।

(य) टेंक में जमा करना– छत से बरसाती पानी को सीधे किसी टेंक में जमाकर उसका उपयोग किया जा सकता है जैसा कि राजस्थान के मरूस्थली क्षेत्रों में सदियों से किया जाता रहा है।

हाल ही में राज्य सरकार ने भवनों के लिये एक नियम बनाया है जिसके अन्तर्गत 300 वर्ग मीटर या इससे अधिक क्षेत्र के आवास/प्रतिष्ठान/होटल आदि के लिये वर्षा जल संचयन अनिवार्य कर दिया है।

5. **अपिशिष्ट जल का शौधन एवं उपयोग** – नगरों एवं कस्बों में अत्यधिक मात्रा में अपशिष्ट जल व्यर्थ हो जाता है। इसे एकत्र कर शोधन किया जाय और उसका उपयोग कृषि, उद्योग आदि में किया जा सकता है।

6. **कृषि पद्धति एवं फसल प्रतिरूप में परिवर्तन** – पानी की कमी को दृष्टिगत रखते हुए राज्य में यह आवश्यक है कि शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में **शुष्क कृषि** (Dry Farming) अपनाई जाय। इसी प्रकार ऐसी फसलों का

उत्पादन किया जाय जिन्हें कम पानी की आवश्यकता होती है।

7. छोटे बाँधों, तालाबों एवं एनिकट आदि का निर्माण – द्वारा स्थानीय स्तर पर जल संग्रहण किया जा सकता है।

8. जर्जर नहरी तंत्र की मरम्मत एवं वितरिकाओं एवं नालों को पक्का करना – राज्य में पुरानी नहरों में जल रिसाव से पानी व्यर्थ होता है इनकी मरम्मत की जानी चाहिये। इसी प्रकार वितरिकाओं को पक्का कर तथा खेतों में पक्के नालों से पानी देने पर जल बचाया जा सकता है। यह कार्य जन सहयोग से सम्भव किया जा सकता है।

9. जल प्रबन्धन – जल संरक्षण हेतु जल प्रबन्ध अति आवश्यक है। इसके अन्तर्गत निम्न प्रावधान आवश्यक है –

(i) उपलब्ध जल का सर्वेक्षण
(ii) जल स्त्रोतों का उचित रख–रखाव
(iii) सिंचाई की नवीन तकनीकों का उपयोग
(iv) जल दुरूपयोग पर नियंत्रण
(v) जल प्रदूषण पर नियंत्रण
(vi) पेय जल को बचाना
(vii) जल वितरण की उचित व्यवस्था
(viii) जलोत्थान की तात्कालिक एवं दीर्घकालिन योजना तैयार करना, आदि।

10. परम्परागत जल संरक्षण विधियों का प्रयोग – राजस्थान में सदियों से जल संरक्षण किया जाता रहा है। उन परम्परागत विधियों को आज भुला दिया गया है। उन्हें पुनः विकसित करके जल संरक्षण करना आवश्यक है। इसके अन्तर्गत झीलों, तालाबों एंव कुओं का उपयोग सर्व प्रचलित है। इसके अतिरिक्त राजस्थान में प्रचलित **नाड़ी, बावड़ी, टोबा, खड़ीन, टांका या कुंडी, कुंई** आदि से जल संरक्षण परम्परागत रूप में किया जाता रहा है, इनके पुनः प्रचलन द्वारा जल संरक्षण किया जाना आवश्यक है। इस दिशा में राज्य सरकार भी वर्तमान में अत्यधिक ध्यान दे रही है।

11. झील संरक्षण योजना – इस योजना में केन्द्र सरकार ने झीलों के संरक्षण हेतु तथा उनके जल की गुणवत्ता तथा उनके सौन्दर्यकरण के लिये वित्त व्यवस्था की है। इस योजना के अन्तर्गत पिछोला, फतेहसागर, पुष्कर, आना सागर और नक्की झील हेतु अनुदान दिया है तथा अन्य प्रमुख झीलों हेतु प्रस्तावित किया गया है।

राजस्थान के लिये जल संरक्षण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है इसके लिये राज्य सरकार भी पर्याप्त ध्यान दे रही है। सरकार के साथ जन भागीदारी भी आवश्यक है क्योंकि जल संरक्षण का सम्बन्ध प्रत्येक व्यक्ति से है और यह अभियान तभी सफल हो सकता है जब प्रत्येक व्यक्ति अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण करे।

वन्य जीव

वन्य जीव वनों में निवास करने वाले जीव हैं जो प्राकृतिक पर्यावरण के अभिन्न अंग है तथा जैव–विविधता के प्रतीक हैं। राजस्थान के भौगोलिक वातावरण की विविधता के कारण यहाँ वन्य जीवों में विविधता है। राज्य में एक ओर विभिन्न प्रकार के जंगली जानवर है तो दूसरी ओर शाकाहारी जीव तथा रेंगने वाले जीव तथा विविध प्रकार के पक्षी है।

मांसाहारी पशुओं में बाघ, तेंदुआ, जरख, जंगली बिल्ली, बिज्जू, भेड़िया, सियार, लोमड़ी, जंगली कुत्ता आदि हैं। **बाघ** मुख्यतया सवाई माधोपुर, धौलपुर, अलवर, करौली, कोटा, सिरोही, चित्तोड़गढ़, उदयपुर, बूंदी तथा डूँगरपुर के जंगलों में पाये जाते हैं। जब कि **चीते** सिरोही, उदयपुर, भीलवाड़ा, डूँगरपुर, करौली, प्रतापगढ़, कोटा तथा अजमेर जिलो में मिलते हैं।

शाकाहारी पशुओं में काला हिरण, चिंकारा, साँभर, नील गाय, चीतल, चौसिंधा, भालू, जंगली सूअर, खरगोश, बंदर, लंगूर प्रमुख है।

काला हिरण – भरतपुर, सिरोही, जयपुर, बाड़मेर, अजमेर, कोटा जिले में।

चिंकारा – भरतपुर, सवाई माधोपुर, जालौर, सिरोही, जयपुर, जौधपुर में।

साँभर – भरतपुर, अलवर, सवाई माधोपुर, उदयपुर, चित्तोड़गढ़, कोटा, झालावाड़, जयपुर, बाड़मेर, अजमेर, डूँगरपुर, बाँसवाड़ा में।

नील गाय – अजमेर, करौली, भरतपुर, झालावाड़, कोटा, गंगानगर, हनुमानगढ़ में।

चीतल – भरतपुर में।

राजस्थान का राज्य पक्षी **गोंडावन** है, जो दुर्लभ प्रजाति की श्रेणी में है। यह बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर क्षेत्रों में है। इसके अतिरिक्त मोर, तीतर, काला तीतर, तिजौर, बटेर, सारस, बुलबुल, नीलकंठ, बाज, गिद्ध, मैना, तोता, कबूतर, कौआ आदि अनेक पक्षी है। घना के पक्षी विहार को **पक्षियों का स्वर्ग** कहा जाता है, यहाँ का मुख्य आकर्षण प्रवासी **साइबेरियन क्रेन** है, जो यहाँ शीतकाल में आते हैं। इसी प्रकार फलौदी के निकट खींचन में **कुरजा** पक्षियों का प्रवास पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र है।

वन्य जीव संरक्षण, राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य जीव अभयारण्य

वन्य जीव प्राकृतिक धरोहर है तथा पारिस्थितिक दृष्टि से उनका अत्यधिक महत्त्व है। वन्य जीवों की निरन्तर कमी आज विश्वव्यापी समस्या है। राजस्थान में भी वन्य जीवों की संख्या में कमी हो रही है तथा अनेक प्रजातियों के विलुप्त होने का संकट है। वन्य जीवों की कमी होने के प्रमुख कारण है। 1. वनों की कमी होना, 2. जलवायु परिवर्तन, 3. वन्य जीवों के प्राकृतिक आवासों का नष्ट होना, 4. वन्य जीवों का शिकार, 5. जल स्त्रोतों का सूखना, आदि। वन्य जीव पारिस्थितिक तन्त्र के अभिन्न अंग हैं अतः वन्य जीवों का संरक्षण आवश्यक है।

वन्य जीवों के संरक्षण हेतु राजस्थान में सर्वप्रथम 1951 में वन्यजीव एवं पक्षी संरक्षण नियम द्वारा इस दिशा में पहला कदम उठाया गया था। 1972 में भारतीय वन्य जीव संरक्षण एक्ट तथा 1986 में पर्यावरण संरक्षण एक्ट द्वारा वन्य जीवों की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु कानूनी प्रावधान किये गये। अनेक स्वयं सेवी संस्थाएं एवं सामाजिक संस्थाएं भी वन्य जीवों के संरक्षण में अच्छा कार्य कर रहे है। विश्नोई समाज के लोग वन्य जीवों की रक्षा हेतु प्रतिबद्ध है। वन्य जीवों के संरक्षण हेतु राज्य में सबसे महत्त्वपूर्ण कदम राष्ट्रीय उद्यान, टाइगर प्रोजेक्ट, अभयारण्य एवं सुरक्षित क्षेत्र बना कर किया गया है। इनका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है–

रणथम्बोर राष्ट्रीय उद्यान – सवाई माधोपुर के निकट रणथम्बोर के चारों ओर के क्षेत्र में फेला यह राष्ट्रीय उद्यान बाघ संरक्षण स्थल है। यहाँ बाघ के अतरिक्त बघेरे, रीछ, सांभर, चीतल, नीलगाय आदि अनेक वन्य जीव निवास करते हैं।

केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान – भरतपुर के निकट यह एशिया में पक्षियों का सबसे बड़ा प्रजनन क्षेत्र माना जाता है। घना के नाम से विख्यात इस क्षेत्र में 113 प्रजातियों के विदेशी प्रवासी पक्षी और 392 प्रजातियों के भारतीय स्थानीय पक्षियों को हर वर्ष देखा जा सकता है। यहाँ साइबेरियन क्रेन (सफेद सारस) सर्दी में प्रवास करते हैं।

राष्ट्रीय मरू उद्यान, जैसलमेर – वर्ष 1981 में जैसलमेर में 'राष्ट्रीय मरू उद्यान' (National Desert Park) की स्थापना इस क्षेत्र की प्राकृतिक वनस्पति एवं करोड़ो वर्षों से भूमि में दबे जीवाश्मों के संरक्षण हेतु की गई। इसे **जीवाश्म उद्यान** (Fossil Park) भी कहा जाता है। यहाँ जीवाश्म एवं वनस्पति संरक्षण के अतिरिक्त यहाँ चिंकारा, चौसिंधा, काला हिरण एवं गोंडावन का भी संरक्षण किया जाता है।

इसके अतिरित कोटा जिले में मुकन्दरा हिल्स को भी राष्ट्रीय उद्यान का स्तर देना स्वीकार किया गया है।

सरिस्का टाइगर प्रोजेक्ट – अलवर से 35 किमी. दूर सरिस्का नामक स्थान पर **'बाघ परियोजना'** के रूप में 'राष्ट्रीय उद्यान' का स्तर दिया गया है। यहाँ बाघ के अतिरिक्त अनेक वन्य जीव निवास करते हैं। किन्तु सरिस्का का कटु सत्य यह है कि यहाँ वर्तमान में बाघ समाप्त हो गये है। पुनः बाघों को बसाने के लिये अन्य क्षेत्रों से बाघ लाये जा रहे हैं।

वन्य जीव अभयारण्य

राजस्थान में वन्य जीवों के संरक्षण हेतु अभयारण्यों को बनाया गया है। राज्य के प्रमुख अभयारण्य हैं – **नाहरगढ़** (जयपुर), **जमवारामगढ़** (जयपुर) **तालछापर**

कृष्ण मृग (चूरू), **जयसमंद** (उदयपुर), **सीता माता** (चित्तोड़गढ़), **बस्सी** (चित्तोड़गढ), **फूलवाड़ी की नाल** (उदयपुर), **भैंसरोड़गढ़** (चित्तोड़गढ़), **सज्जनगढ़** (उदयपुर), **जवाहर सागर** (कोटा), **शेरगढ़** (बांरा), **टाडगढ़** (ब्यावर के निकट), **चम्बल** (कोटा), **रामगढ़ विषधारी** (बूंदी), **बन्ध बारेठ** (भरतपुर), **सवाई मान सिंह** (सवाई माधोपुर), **केला देवी** (करौली), **राम सागर** (धौलपुर), **आबू पर्वत** (सिरोही), **कुम्भलगढ़–राणकपुर** (उदयपुर)।

मृगवन –

राजस्थान में निम्नलिखित मृगवन हैं : **अशोक विहार मृगवन** (जयपुर), **माचिया सफारी पार्क** (जोधपुर, कायलाना झील के पास), **चित्तौड़गढ़ मृगवन, पुष्कर मृगवन, संजय उद्यान मृगवन** (शाहपुरा–जयपुर), एवं **सज्जनगढ़ मृगवन** (उदयपुर)।

आखेट निषिद्ध क्षेत्र :

वन्य जीव सुरक्षा अधिनियम 1972 की धारा 37 के अनुसार राज्य में 33 क्षेत्रों को आखेट निषिद्ध क्षेत्र घोषित किया गया है। इन क्षेत्रों में रहने वाले वन्य प्राणियों की सुरक्षा की जाती है तथा यहाँ शिकार वर्जित होता है।

राजस्थान में वन्य जीवों के संरक्षण एवं उनके आवास स्थलों को सुरक्षित रखने के लिये एक रिर्पोट तैयार की गई है तथा उसको लागू करते हुए एक कमेटी गठित की गई है। प्रदेश में वन्य जीवों का आकलन कराया जा रहा है। रणथम्बोर एवं सरिस्का बाघ परियोजना क्षेत्र को सुरक्षित रखने हेतु अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। इस सम्बन्ध में वन्य जीव प्रबन्धन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, विशेषकर वनों को सुरक्षित रखना, तथा वन्य जीवों के शिकार पर पूरी तरह रोक लगाना अतिआवश्यक है। वन्य जीवों की विलुप्त होती प्रजातियों का समुचित ज्ञान प्राप्त करना तथा उनके संरक्षण की व्यवस्था करके उन्हें विलुप्त होने से बचाया जा सकता है।

खनिज संसाधन

खनिज संसाधनों में राजस्थान एक समृद्ध राज्य है क्योंकि यहाँ अनेक प्रकार के खनिज उपलब्ध है। इसी कारण भूगर्भवेत्ताओं ने इसे **'खनिजों का संग्रहालय'** (Museum of Minerals) कहा है। यहाँ की प्राचीन एवं विविधतापूर्ण भूगर्भिक संरचना ने खनिज संसाधनों में भी विविधता को जन्म दिया है।

भारत में राजस्थान का खनिज उत्पादन में विशेष महत्त्व है। जेस्पार, गार्नेट, वोलस्टोनाइट और पन्ना का राजस्थान देश का एकमात्र उत्पादक राज्य है। देश में उत्पादित जस्ता का 99 प्रतिशत, जिप्सम का 93 प्रतिशत, ऐस्बस्टोस का 89 प्रतिशत, घिया पत्थर (सोप स्टोन) का 85 प्रतिशत, सीसा का 77 प्रतिशत, रॉक फास्फेट का 75 प्रतिशत, फेल्सपार का 70 प्रतिशत, बुल्फेमाइट का 50 प्रतिशत, तांबा का 36 प्रतिशत तथा अभ्रक का 22 प्रतिशत भाग राजस्थान का है। इसके अतिरिक्त इमारती पत्थर विशेषकर संगमरमर के उत्पादन में भी राजस्थान का विशेष महत्व है।

राज्य के खनिजों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जाता है–

1. धात्विक खनिज (Metallic Minerals)
2. अधात्विक खनिज (Non – metallic Minerals)
3. ऊर्जा उत्पादक खनिज (Power Producing Minerals)

1. धात्विक खनिज : राजस्थान के धात्विक खनिजों में **लोहा–अयस्क, मैंगनीज, तांबा, सीसा, जस्ता, चांदी, बैरेलियम, टंगस्टन** तथा **केडमियम** प्रमुख है। राज्य के धात्विक खनिजों के वितरण को मानचित्र 4.1 में प्रदर्शित किया गया है–

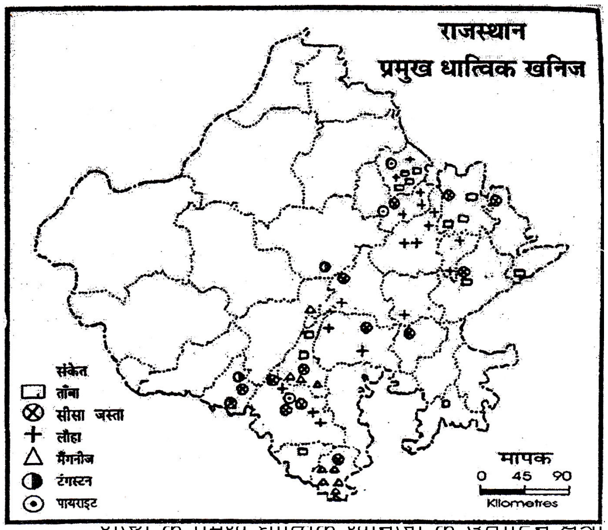

मानचित्र 4.1

राजस्थान के प्रमुख धात्विक खनिज

राज्य के प्रमुख धात्विक खनिजों के उत्पादन क्षेत्रों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

लौह अयस्क – लौह अयस्क में राजस्थान महत्त्वपूर्ण नहीं है। राज्य में जयपुर, सीकर के कुछ क्षेत्रों में बूंदी से भीलवाड़ा, कांकरोली, उदयपुर, डूँगरपुर होती हुई बांसवाड़ा की पेटी में लोहा अयस्क के भण्डार है, किन्तु राज्य में व्यापारिक स्तर पर इसका खनन लाभकारी नहीं है।

मैंगनीज – राजस्थान में बांसवाड़ा जिले के लीलवानी, नरडिया, सिवोनिया, कालाखूंटा, सागवा, इटाला, काचला, तलवाड़ा आदि में निकाला जाता है। जयपुर, उदयपुर, और सवाई माधोपुर में भी मैंगनीज पाया जाता है।

सीसा और जस्ता – राजस्थान सीसा–जस्ता उत्पादन में अग्रणी है। सीसा–जस्ता उत्पादक क्षेत्रों में चाँदी भी मिलती है। राज्य के प्रमुख सीसा–जस्ता के साथ ही चाँदी भी मिलती है। राज्य के प्रमुख सीसा–जस्ता उत्पादक क्षेत्र दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान में उदयपुर, राजसमंद, डूँगरपुर, बाँसवाड़ा और भीलवाड़ा में स्थित है। प्रमुख जस्ता–सीसा उत्पादक क्षेत्र है– जावर, राजपुरा–दरीबा एवं आगूचा–गुलाबपुरा।

ताँबा– ताँबा राजस्थान के कई स्थानों पर मिलता है, इनमें झुंझुनू जिले में खेतड़ी, सिंघाना तथा अलवर जिले में खो–दरीबा क्षेत्र महत्वपूर्ण हैं। खेतडी क्षेत्र में लगभग 8 करोड़ टन ताँबें के भण्डार का अनुमान है। अलवर में खो–दरीबा के अतिरिक्त थानागाजी, कुशलगढ़, सेनपरी तथा भगत का बास में भी ताँबे की खाने मिली है।

टंगस्टन– राज्य में डेगाना (नागौर जिला) क्षेत्र में टंगस्टन के भण्डार है। डेगाना स्थित खान देश में एक मात्र खान है, जहाँ टंगस्टन का उत्पादन हो रहा है।

चाँदी– राजस्थान में सीसा–जस्ता के साथ मिश्रित रूप में चाँदी का उत्पादन होता है। उदयपुर तथा भीलवाड़ा जिलों की सीसा–जस्ता खदानों से चाँदी प्राप्त होती है, वार्षिक उत्पादन लगभग तीस हजार किलोग्राम है।

अधात्विक खनिज

राजस्थान अधात्विक खनिजों के उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है, इन्हें निम्न श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है–

उर्वरक खनिज– जिप्सम, रॉक फास्फेट, पाईराइट।

बहुमूल्य पत्थर– पन्ना, तामड़ा, हीरा।

आणविक एवं विद्युत उपयोगी– अभ्रक, यूरेनियम।

ऊष्मारोधी, उच्चताप सहनीय एवं मृतिका खनिज– एस्बेटास, फेल्सपार, सिलिका सेण्ड, क्वार्ट्ज, मेगनेसाइट, वरमेकुलेट, चीनी मिट्टी, डोलोमाइट आदि।

रासायनिक खनिज– नमक, बेराइट, ग्रेनाइट, स्लेट आदि।

अन्य खनिज– घीया पत्थर, केल्साइट, स्टेलाइट आदि।

प्रमुख अधात्विक खनिजों का वितरण मानचित्र 4.2 में प्रदर्शित है–

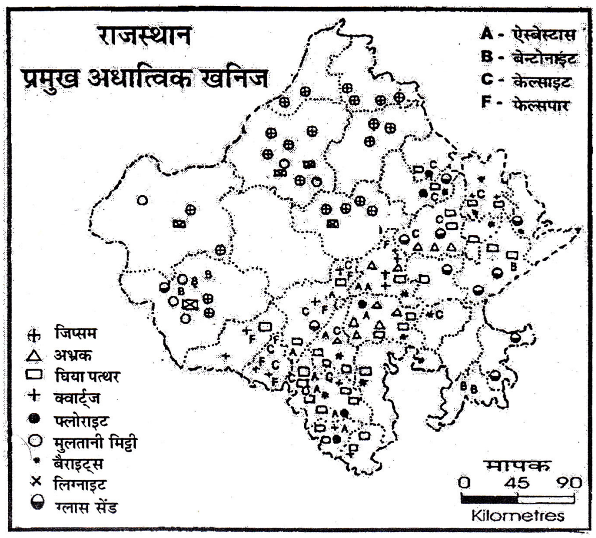

प्रमुख अधात्विक खनिजों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है–

ऐस्बेस्टॉस– राजस्थान ऐस्बेस्टास का प्रमुख उत्पादक है और भारत का 90 प्रतिशत भाग उत्पादित करता है। ऐस्बेस्टास के प्रमुख उत्पादक जिले उदयपुर, डूँगरपुर है तथा अजमेर, उदयपुर तथा जौधपुर में सीमित उत्पादन होता है।

फेल्सपार– राजस्थान भारत का 60 प्रतिशत फेल्सपार का उत्पादन करता है। राज्य का अधिकांश फेल्सपार अजमेर जिले से प्राप्त होता है। जयपुर, पाली, टोंक, सीकर, उदयपुर, और बाँसवाड़ा में भी सीमित मात्रा में फेल्सपार मिलता है।

अभ्रक– राजस्थान में अभ्रक उत्पादन की तीन

पेटियाँ–जयपुर–टोंक पेटी, भीलवाड़ा–उदयपुर पेटी और अन्य में सीकर में तोरावाटी तथा अजमेर, राजसमंद, अलवर तथा पाली जिलों में हैं।

जिप्सम– राजस्थान भारत का 90 प्रतिशत जिप्सम उत्पादित करता है। इसके प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है– बीकानेर, हनुमानगढ़, चूरू क्षेत्र, नागौर क्षेत्र, जैसलमेर–बाड़मेर, पाली– जौधपुर क्षेत्र हैं।

रॉक फास्फेट– राजस्थान देश का लगभग 56 प्रतिशत रॉक फास्फेट उत्पादित करता है। इसके उत्पादक जिले उदयपुर, बाँसवाड़ा, जैसलमेर और जयपुर है।

डोलोमाइट– राज्य के बाँसवाड़ा, उदयपुर और राजसमंद जिलों में प्रमुखता से तथा अलवर, झुंझुनु, सीकर, भीलवाड़ा, नागौर जिलों में सीमित उत्पादन होता है।

घिया पत्थर– राजस्थान में देश का 90 प्रतिशत घिया पत्थर उत्पादित होता है। राज्य में राजसमंद, उदयपुर, दौसा, अजमेर, अलवर, डूँगरपूर, बाँसवाड़ा, करौली एवं भीलवाड़ा जिलों से घिया पत्थर का उत्पादन होता है।

इमारती पत्थर– राजस्थान इमारती पत्थर के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का संगमरमर प्रसिद्ध है। इसके लिए मकराना भारत भर में प्रसिद्ध है। संगमरमर के अन्य उत्पादक क्षेत्र किशनगढ़, अलवर, सीकर, उदयपुर, राजसमंद, बाँसवाड़ा में है। जालौर, पाली, बूंदी, अजमेर में भी संगमरमर सीमित खनन हो रहा है।

चूना पत्थर सिराही, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, बूंदी, कोटा, जैसलमेर, बाँसवाड़ा, अजमेर, अलवर, जयपुर, नागौर और जौधपुर जिलों में मिलता है। **सेण्ड स्टोन** अर्थात **बालुआ पत्थर** जौधपुर, कोटा, बूंदी, भीलवाड़ा, जिलों में प्रमुखता से मिलता है। अन्य इमारती पत्थरों में **ग्रेनाइट, सिस्ट, क्वार्टजाइट, स्लेट, कॉजला** भी राजस्थान में मिलता है।

बहुमूल्य पत्थर

राजस्थान बहुमूल्य पत्थरों के उत्पादन के लिये भी प्रसिद्ध है। यहाँ पन्ना और तामड़ा प्रमुख रूप से उत्पादित होते हैं। **पन्ना** एक सुन्दर हरे रंग का चमकीला रत्न होता है। पन्ना मुख्यत : उदयपुर जिले के उत्तर में एक पेटी में मिलता है जिसका विस्तार देवगढ़ से कॉकरोली, राजसमंद जिले तक है। अजमेर के राजगढ़ से क्षेत्र में भी पन्ना मिलता है। **तामड़ा** भी एक बहुमूल्य पत्थर है जो लाल, गुलाबी रंग का पारदर्शी रत्न है। राजस्थान में टोंक, अजमेर, भीलवाड़ा, सीकर तथा चित्तोड़गढ़ में तामड़ा निकाला जाता है। तामड़ा उत्पादन में राजस्थान का एकाधिकार है।

अन्य अधात्विक खनिजों में राजस्थान में **केल्साइट, बेण्टोनाइट, नमक, पाइराइट** आदि का उत्पादन होता है। ऊर्जा संसाधनों में कोयला बीकानेर के पलाना में और खनिज तैल बाड़मेर, जैसलमेर में निकाला जाता है। इनका विवरण अगले अध्याय में किया जायेगा।

खनिज संरक्षण

राजस्थान में जिस गति से खनिजों का शोषण हो रहा है, वह दिन दूर नहीं, जब ये खनिज समाप्त हो जाएंगे। खनिज एक प्राकृतिक सम्पदा है, यदि इसे अनियन्त्रित और अनियोजित तरीके से निकाला गया तो यह समाप्त हो सकता है। जब एक बार खनिज समाप्त हो जाते है तो इन्हे पुनः प्राप्त नहीं किया जा सकता क्योंकि लाखों वर्षों की प्रक्रिया से खनिज अस्तित्व में आते है। अतः खनिजों का संरक्षण अति आवश्यक है। खनिज संरक्षण हेतु प्रमुख उपाय निम्नलिखित हैं–

(1) खनिज का बहुउद्देशीय उपयोग

(2) उत्खतित खनिजों से अधिकतम धातु प्राप्त करना

(3) खनिजों के विकल्पों की खोज

(4) खनिजों का नियोजित खनन

(5) धातु का बारम्बर प्रयोग

(6) गहराई तक खनन

(7) भूगर्भिक सर्वेक्षण एवं दूर संवेदन तकनीक से नए खनिजों की खोज

(8) खनिज खनन पर सरकारी नियन्त्रण

(9) उचित खनिज प्रबन्धन के अन्तर्गत निम्न कार्य किये जाने आवश्यक हैं –

(i) सर्वेक्षण

(ii) खनिज उपयोग प्राथमिकता का निर्धारण

(iii) अनियन्त्रित खनन पर रोक

(iv) खनन में उन्नत तकनीक का प्रयोग

(v) सामरिक एवं अल्प उपलब्ध खनिजों के उपयोग पर नियन्त्रण

(vi) दीर्घकालीन योजना द्वारा खनिजों के उचित उपयोग

(vii) आधुनिक तकनीकों के माध्यम से नवीन खनिज भण्डारों का पता लगाना

(viii) खनिज खनन से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव न हो इसके लिये आवश्यक व्यवस्था करना आदि।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

(1) निम्नलिखित में प्राकृतिक संसाधन है –

(अ) प्राकृतिक वनस्पति (ब) मृदा

(स) जल (द) उपर्युक्त सभी

(2) राजस्थान में वनों के अन्तर्गत कितना प्रतिशत क्षेत्र है –

(अ) 9.54 (ब) 10.26

(स) 8.67 (द) 9.55

(3) जलोढ़ मृदा किसके द्वारा जमा की जाती है –

(अ) वायु द्वारा (ब) नदियों द्वारा

(स) जीवों द्वारा (स) लावा द्वारा

(4) राजस्थान की वर्ष भर बहने वाली नदी है –

(अ) बनास (ब) लूनी

(स) चम्बल (द) काली सिन्ध

(5) बालसमंद झील कहाँ स्थित है –

(अ) उदयपुर (ब) जोधपुर

(स) राजसमंद (द) जयपुर

(6) शुष्क कृषि हेतु उपयुक्त क्षेत्र है –

(अ) हाड़ौती का पठार

(ब) पूर्वी राजस्थान

(स) दक्षिणी राजस्थान

(स) पश्चिमी राजस्थान

(7) जल संरक्षण की परम्परागत विधि है –

(अ) खड़ीन (ब) टांका

(स) नाड़ी (द) उपर्युक्त सभी

(8) राजस्थान का राज्य पक्षी है –

(अ) सारस (ब) मोर

(स) गोंडावन (द) बुलबुल

(9) घना पक्षीविहार कहाँ स्थित है –

(अ) जयपुर (ब) भरतपुर

(स) अजमेर (द) बीकानेर

(10) जीवाश्म उद्यान कहाँ स्थित है –

(अ) नागौर (ब) जैसलमेर

(स) बाड़मेर (द) बीकानेर

(11) राजस्थान में टंगस्टन कहाँ पाया जाता है –

(अ) देबारी (ब) खेतड़ी

(स) डेगाना (द) पलाना

अतिलघूरात्मक

1. आरक्षित वन किसे कहते हैं ?
2. कौनसा वृक्ष राजस्थान का राज्य वृक्ष है ?
3. राजस्थान में सागवान कहाँ अधिक मिलता है ?
4. वनोन्मूलन किसे कहते है ?
5. उदयपुर नगर की प्रमुख झीलें कौन सी है ?
6. सरिस्का टाइगर प्रोजेक्ट कहाँ स्थित है ?
7. राज्य में संगमरमर उत्पादन का प्रसिद्ध क्षेत्र कौन सा हैं ?
8. राजस्थान में कौन से बहुमूल्य पत्थर निकलते है ?

लघू उत्तरात्मक

1. राजस्थान में कितने प्रकार के वन मिलते है ?
2. वनों का जलवायु पर प्रभाव बताइये ?
3. सामाजिक वानिकी से क्या तात्पर्य है ?
4. वन प्रबन्धन से क्या तात्पर्य है ?
5. 'हरित राजस्थान' कार्यक्रम से क्या तात्पर्य है ?
6. मृदा अपरदन किसे कहते है ?
7. राजस्थान में जल संसाधन की परम्परागत चार विधियों का नाम लिखिये ?
8. सिंचाई की पानी बचाते हुए कौन सी विधि उपयुक्त होती है ?
9. राजस्थान में वर्षा जल संचयन क्यों आवश्यक है ?
10. राजस्थान के राष्ट्रीय उद्यानों के नाम लिखिए ?
11. राजस्थान को खनिजों का संग्रहालय क्यों कहा जाता है ?

निबन्धात्मक

1. वनों का प्राकृतिक एवं आर्थिक महत्व स्पष्ट करते हुए इनके संरक्षण की आवश्यकता का विवेचन कीजिये।
2. वन संरक्षण एवं संवर्धन की विधियों का वर्णन कीजिये।
3. राजस्थान के मृदा संसाधनों का वर्णन कीजिये तथा इसके संरक्षण के उपाए बताइये।
4. राजस्थान में जल संरक्षण के उपायों का विवेचन कीजिये।
5. राजस्थान के वन्य जीवों के संरक्षण हेतु किये जा रहे उपायों का वर्णन कीजिये।
6. राजस्थान के खनिज संसाधनों का वर्णन कीजिये।

□□□